**ओ३म्**

**‘महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना क्यों की थी?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 महर्षि दयानन्द एक सिद्ध योगी थे। उनका जीवन कुछ प्रमुख धार्मिक विषयों जैसे ईश्वर के सत्य स्वरूप व मृत्यु पर विजय के उपायों की खोज करने में व्यतीत हुआ। वह इन विषयों के यथार्थ उत्तर जानने व प्राप्त करने में सफल भी हुए। अपने गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती की प्रेरणा व अपने निर्णय के अनुसार उन्होंने अज्ञान, अन्धविश्वासों व सामाजिक कुप्रथाओं से युक्त हिन्दुओं के सुधार के लिए सत्य वैदिक मत का प्रचार किया था। इसके अन्तर्गत उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना सहित काशी में वहां के प्रमुख पौराणिक विद्वानों के साथ मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ भी किया था जिसका उद्देश्य मिथ्या पूजा का त्याग कर ईश्वर द्वारा वेदों में विहित पूजा को प्रचलित करना था। कालान्तर में उन्होंने **‘‘सत्यार्थ प्रकाश”** जैसा कालजयी ग्रन्थ लिखा जिसकी उपमा **‘न भूतो न भविष्यति’** कह सकते हैं। इसके बाद उन्होंने वेदों को लोकप्रिय बनाने व वेद विषयक शंकाओं को दूर करने के लिए अनेक ग्रन्थ लिखे जिनमें ऋग्वेद (अपूर्ण, मण्डल 7 सूक्त 62 के दूसरे मन्त्र तक) और यजुर्वेद सम्पूर्ण भाष्य संस्कृत व हिन्दी दो भाषाओं के अतिरिक्त ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, आर्याभिविनय, संस्कार विधि, गोकरूणानिधि, व्यवहारभानु, संस्कृत वाक्य प्रबोध आदि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन व प्रचार किया। पूर्वाग्रहों से मुक्त अनेक देशी व विदेशी विद्वान उनके प्रशंसक बने जिनमें प्रो. मैक्समूलर आदि विेदशी विद्वान भी सम्मिलित हैं। वेदों के सत्यार्थ के प्रचार के लिए उन्होंने प्रायः सभी मत-मतान्तरों के आचार्यों से शास्त्रार्थ सहित उनका शंका समाधान किया व चर्चायें की। इन सबका उद्देश्य समाज से अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियों, सामाजिक असमानता, बाल व बेमेल विवाह सहित अवतारवाद की धारणा, फलित ज्योतिष व मृतक श्राद्ध आदि को समाप्त कर वैदिक मान्यताओं पर आधारित आधुनिक समाज का निर्माण करना था। वह अपने उद्देश्य में आंशिक रूप से सफल भी हुए परन्तु उनकी अल्पकालिक मृत्यु के कारण जिस तेजी से कार्य बढ़ रहा था, उस पर विराम लग गया अथवा शिथिल पड़ गया। उनके बाद उनके अनुयायियों की पहली व दूसरी पीढ़ी ने देश व जाति के सुधार के अनेक प्रशंसनीय कार्य किये जिससे समाज में परिवर्तन व सुधार हुआ परन्तु अभी बहुत बड़ा लक्ष्य प्राप्त करना शेष है।

आज आर्यसमाज की जो दशा है उसके रहते सुधार की गति मन्द व शिथिल हो गई है। व्यापक रूप से विचार करें तो देश की धर्म व संस्कृति की रक्षा, जो महर्षि दयानन्द के जीवन का मुख्य लक्ष्य कह सकते हैं, वह सफल होती दिखाई नहीं दे रही है। समाज में अन्धविश्वास व अज्ञान का बढ़ना निरन्तर जारी है। अज्ञान व अविद्या पर आधारित नये नये मत नित्य प्रति अस्तित्व में आ रहे हैं जिनके आचार्य समाज में अज्ञान परोस रहे हैं। अन्य समुदायों के लोगों ने भी आर्यसमाज को अपनाना प्रायः छोड़ दिया है। आर्यसमाज की समस्त गतिविधियां आर्यसमाज के मन्दिर में साप्ताहिक सत्संग व यदाकदा वार्षिकोत्सव और बहुत हुआ तो वेद पारायण या बहुकुण्डीय यज्ञ तक ही सीमित रह गई है। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आर्यसमाज ने भी अन्य मतों की तरह एक मत का रूप ले लिया है। आर्यसमाज का आर्यसमाज से बाहर प्रचार व प्रसार सीमित व प्रायः बन्द ही दृष्टिगोचर होता है। आर्यसमाजियों व हिन्दुओं की जनसंख्या के आंकड़े बतातें हैं कि इनकी जनसंख्या निरन्तर कम हो रही है और उसके विरोधियों की संख्या बढ़ रही है। कहीं कहीं ऐसी हिंसक घटनायें होती है जिसमें हिन्दुओं के जानमाल की भारी हानि होती है। हिन्दुओं पर आघात हो तो राजनैतिक दल भी मौन व्रत रख लेते हैं। जहां से वोट बैंक बढ़ता हो, उसके लिए कुछ भी करने को वह तैयार रहते हैं। ऐसी स्थिति में हमें सोचना चाहिये कि महर्षि दयानन्द ने जिस उद्देश्य को सामने रखकर अपने जीवन को आहूत किया था, क्या कहीं हम उस लक्ष्य से दूर तो नहीं हो रहे है? हमें लगता है कि इसका उत्तर हम लक्ष्य से दूर होते जा रहे हैं, ऐसा ही प्रतीत होता है।

महर्षि दयानन्द सत्य के सबसे बड़े आग्रही थे। उनके बारे में यह प्रसिद्ध भी है कि यदि उन्हें तोप के मुंह पर रखकर असत्य को स्वीकार करने के लिए कहा जाता तो भी वह मरना पसन्द करते परन्तु असत्य स्वीकार न करते। ऐसा उन्होंने कहीं कहा भी है। जोधपुर जाने के प्रकरण में यह तो उन्होंने कहा ही है कि यदि कोई उनकी उंगलियों को दीये की बत्ती के समान जला भी दे, तो भी सत्य का मण्डन और असत्य का खण्डन करने से उन्हें नहीं रोग सकता। समाज में अज्ञान व अन्धविश्वास बढ़ने का एक कारण हमारे कुछ आचार्यों का अपने पृथक मत-मतान्तरों से होने वाले आर्थिक लाभों से भी है। यह सभी आचार्य वेदों व राम तथा कृष्ण आदि को अपना पूर्वज मानने वाले लोगों को संगठित करने और उनकी रक्षा व उनके हितों की सुरक्षा पर न तो विचार करते हैं, उसमें सहयोग व किसी स्वीकार्य योजना पर काम करने की बात तो बहुत दूर है। अतः आर्यसमाज हमें आगे बढ़ता व सफल होता दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। आर्यसमाज के दिग्गज व विरोधी विद्वानों व नेताओं को भी इस विषय पर संगठित रूप से विचार करना चाहिये। हमें नहीं लगता कि हमारे नेता व विद्वान संगठित होकर इस विषय पर विचार करेंगे? हमें तो यही लगता है कि मनुस्मृति का श्लोक **‘धर्मो एवं हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः’** के अनुसार वृहत हिन्दु समाज जिसमें आर्यसमाज भी है, धर्म की रक्षा न करने के कारण धर्म भी उनकी रक्षा नहीं करेगा। हम यह अनुभव करते हैं कि आर्यसमाज के नेताओं व विद्वानों को इस पर सम्यक विचार कर योजना बनानी चाहिये। भावी खतरों से पौराणिक धर्म गुरुओं, विद्वानों व बन्धुओं को भी आगाह करना चाहिये। समय समय पर उन्हें आर्यसमाज मन्दिर में आमंत्रित कर परस्पर हितों के विषयों पर मित्रतापूर्ण वातावरण में चर्चायें करनी चाहियें। नई व युवा पीढ़ी में वैदिक धर्म के संस्कार कैसे स्थापित किये जायें जिससे वह शिक्षा प्राप्त कर आजकल की तरह खुले विचारों जिसमें अधर्म को ही धर्म व उचित माना जाता है, उसके आग्रही व समर्थक न होकर वैदिक मान्यताओं पर स्थिर रहे, इसके लिए भी ठोस कार्य करना होगा। हमें यह भी विचार करना चाहिये कि महाभारत काल तक संसार में वैदिक मत के अनुयायी 100 प्रतिशत थे और आज घटकर 12 से 15 प्रतिशत ही रह गये हैं। इससे भविष्य का अनुमान लग सकता है।

महर्षि दयानन्द का आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य वैदिक ज्ञान से सारे संसार को आलोकित करना था जिससे लोग सत्यासत्य को जानकर अपनी इच्छा व विवेक के अनुसार धर्म, मत, पन्थ, सम्प्रदाय आदि का चुनाव कर सकें। यह कार्य प्रायः भुला ही दिया गया है। आज आर्यसमाज की जो प्रचार शक्ति है उसके सम्मुख लक्ष्य बहुत बड़ा है। यदि हम वर्तमान स्थिति को भी बना कर रख पायें और धीरे धीरे ही सही, वेद प्रचार कार्य में आगे बढ़े तो भी सुधार हो सकता है। इतिहास के विषय में हमें लगता है कि किसी जाति का भविष्य उसके वर्तमान की स्थिति, कार्यों व निर्णयों पर निर्भर करता है। यदि आज हम कुछ ठोस नहीं करेंगे तो हमारा भविष्य अच्छा नहीं हो सकता। अच्छा भविष्य उन्हीं का होगा जो आज सत्य न सही, असत्य के लिए ही गम्भीर रूप से सचेत होकर पुरुषार्थ कर रहे हैं। एक बार स्वामी विद्यानन्द विदेह जी ने प्रवचन में कहा था कि विजय न सत्य की होती है न असत्य की, विजय उसकी होती है जो पुरुषार्थ अधिक करता है। इससे हमें शिक्षा लेनी चाहिये। यह पंक्तियां कोई लेख नहीं, अपितु जीटीवी पर बंगाल में एक वर्ग विशेष के विरुद्ध सुनियोजित हिंसा की घटनायें देख व सुनकर उत्पन्न पीड़ा की अभिव्यक्ति मात्र है। सभी वैदिक धर्मी लोग सत्य धर्म का पालन करें और उसके प्रचार प्रसार के लिए प्राणपण से कार्य करे, यही दवा रोग के इलाज की प्रतीत होती है। इसके साथ हमें अपने निजी स्वार्थों से भी ऊपर उठना होगा। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो’ का ऋषि दयानन्द** **का अभिप्राय’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ऋषि दयानन्द ने 30 अक्तूबर, 1883 को सायं लगभग 6:00 बजे अजमेर नगर की भिनाय की कोठी में अपने प्राणों त्याग किया था। मृत्यु से पूर्व उन्होंने ईश्वर की प्रार्थना करते हुए कहा था कि ईश्वर **‘तूने अच्छी लीला की, अहा तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो।’** हम ऋषि के शब्द **‘तेरी इच्छा पूर्ण हो’** पर विचार कर रहे हैं। यह सुनिश्चित है कि मृत्यु के बाद जीव की दो ही गतियां होती है। या तो कर्मानुसार पुनर्जन्म अथवा मोक्ष प्राप्ती। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में मोक्ष का स्वरूप प्रस्तुत किया है। एक मुमुक्षु में मोक्ष प्राप्ति के लिए जो गुण, कर्म व स्वभाव होने चाहिये वह ऋषि दयानन्द पूर्ण रूप में थे। वह वेदों के ज्ञान से प्रकाशित थे और उस ज्ञान के अनुरूप ही उनका आचरण था। वह एक सिद्ध योगी भी थे और उनके जीवन चरित के अनुसार वह प्रातः भ्रमण को जाते समय वहां रूककर व रात्रि शयन के समय भी समाधिस्थ होते थे। वेदों का भाष्य कराते समय यदा कदा किसी मन्त्र की व्याख्या व भाष्य कराते हुए कुछ कठिनाई या शंका होने पर वह अपनी कुटी व कक्ष में चले जाते थे और समाधि लगाकर ईश्वर से मन्त्रार्थ पूछ कर व समाधि में मन्त्रार्थ पर चिन्तन व मनन कर सही अर्थ का ज्ञान होने पर बाहर आते और लेखक पण्डितों को मन्त्रार्थ व भाष्य लिखाते थे। उनके जीवन पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि उन्होंने अपने जीवन में कोई अशुभ व पाप कर्म नहीं किया। अतः साधारण लोगों के समान तो उनका पुनर्जन्म होगा नहीं, कुछ विशिष्ट की सम्भावना प्रतीत होती है।

 स्वामी जी ने मृत्यु से पूर्व जो वाक्य बोला कि **‘हे ईश्वर ! तेरी इच्छा पूर्ण हो’**, हमें लगता है कि इसमें उनका यह भाव रहा होगा कि मृत्यु तो अब हो ही रही है, इसके बाद पुनर्जन्म या मोक्ष जो भी होना है, उसको विचार कर ऋषि ने कहा कि हे ईश्वर! मुझे पुनर्जन्म व मोक्ष देने विषयक तेरी जो इच्छा व निर्णय है, वह पूरी हो। हम मित्रों वा पाठकों से अनुरोध करते हैं कि इस विषय में वह अपनी सम्मति भी देने की कृपा करें।

 ऋषि दयानन्द ने यह भी कहा है कि **‘ईश्वर ! तूने अच्छी लीला की।’** इसका अभिप्राय हमें यह लगता है कि ऋषि दयानन्द के जीवन में शिवरात्रि को चूहों की घटना को देखकर जो भाव उत्पन्न हुए तथा उसके बाद बहिन और चाचा की मृत्यु से उनमें जो वैराग्य जगा, वही उनके भावी जीवन का कारण, आधार व साधन बने। इन घटनाओं के कारण ही वह योग के रहस्यों का परिचय प्राप्त करते हुए वेदों की उपलब्घि व उनके यथार्थ ज्ञान से संतृप्त हुए। उनके जीवन में जो कुछ घटा, उसी को ध्यान में रखकर, हमें लगता है, मानों वह ईश्वर को कह रहे हैं कि यह सब तेरी लीला ही थी और इस सबको उन्होंने अपने अन्तिम शब्दों में कहा कि तूने अच्छी लीला की। यदि ईश्वर यह लीला न करता या स्वामी दयानन्द जी के जीवन में यह सब कुछ इस प्रकार से न होता तो जो महान व अपूर्व समाज व देश सुधार सहित वेदोद्धार का कार्य उन्होंने किया, वह न हो पाता। इसका श्रेय **‘तैने अच्छी लीला की’** कहकर स्वामी जी ने ईश्वर को ही दिया है। यह एक प्रकार से उन्होंने अपने जीवन में किेये सभी शुभ कर्मों का ईश्वर को समर्पण किया है। अहंकार से बचने का यही उपाय होता है कि हम जो भी शुभ कर्म करें उसे ईश्वर को समर्पित कर दें। उसमें हमारा कर्तव्य भाव रहे। यदि हमारे द्वारा किया गया कोई परहित का कार्य सफल होता है तो इसे ईश्वर की कृपा मानना चाहिये।

 पश्चिमी बंगाल के मालदा नगर से एक बन्धु श्री नीतेश आर्य जी यदा कदा दूरभाष कर अपनी कुछ शंकाओं की चर्चा करते रहते हैं। उनसे वार्ता करते हुए हमारे मन में यह विचार आया कि **ऋषि ने ईश्वर को पुनर्जन्म व मोक्ष को लक्ष्य कर कहा था कि तेरी जो इच्छा है, पुनर्जन्म देने व मोक्ष प्रदान करने की, वह तेरी इच्छा पूर्ण हो।** पाठक बन्धु इस पर अपनी राय अवश्य सूचित करें। इति ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001/फोनः09412985121**